आदिनाथ भगवान की टोंक का रास्ता ४ किलोमीटर है जिस में ३७५० सीढीयां हैं. बीच बीच सीधा रास्ता है। रास्ते में स्थान स्थान पर विश्राम स्थल हैं। यहां ठण्डा स्वच्छ जल की व्यवस्था है। तलहटी से ३ किलोमीटर चढने के बाद दो रास्ते दिखाई देते हैं। एक रास्ता भगवान आदिनाथ के मुख्य मन्दिर की ओर जाता है और दूसरा रास्ता वन वाली टोंक की ओर जाता है। मुख्य टोंक की ओर जाने पर सर्वप्रथम रामपोल और बाध्नपोल दिखाइ देती हैं। आगे हाथी पोल में यात्री प्रवेश करता है। यहां सूर्य कुण्ड, भीम कुण्ड व ईश्वर कुण्ड दिखाई देते हैं।

इस पर्वत पर बने सभी मन्दिर अलग अलग विभागों में बंटे हैं। हर एक विभाग को टोंक कहते हैं। एक एक टोंक में अनेकों मन्दिर हैं और चारों ओर बडा परकोटा है। यहां के मन्दिर देव विमान जैसे लगते हैं। जैसे हजारों देव विमान इस पर्वत पर उतरे हों। मोतीशा की टोंक में २१६ मन्दिर हैं। इस के इलावा भारी मात्रा में देहरीयां है। सबसे ज्यादा मन्दिर आदिश्वर नाथ टोंक पर हैं।

इस पर्वत पर १० टोंक हैं। इस पास ही धनवसही टोंक पर पद्मापूरी मन्दिर की रचना है। इन टोंक के पवित्र नाम इस प्रकार हैं।

१. श्री आदिश्वर प्रभु का मुख्य टोंक २. मोती शाह टोंक ३. वालावसहीं ४. प्रेमवसहीं ५. हेमवसही ६. उजमवसहीं की टोंक ७. साखर वसहीं ८. छीपावसही ९. सवासोम की टोंक १०. खरतरवसहीं ११. तलहंटी पर धनवसहीं।

इन सब में सवासोम की टोंक में चोमुख मन्दिर सब से उंचा है। यह मुख्य मन्दिर है जहां मूलनायक प्रथम तीर्थंकर भगवान आदिश्वर जी विराजमान हैं। यह मन्दिर बहुत प्राचीन है। मोतिशाह की टोंक में १६ मन्दिर और १२३

छोटी देहरीयां है। वह मन्दिर नलिनी गुल्म विमान का दृश्य प्रस्तुत करते हैं।

एक पहाड़ जिसे अद्भुत जी कहते हैं वहां भगवान ऋषभदेव की १८ फुट उंची १४ फुट चौडी पद्मासन प्रतिमा विराजित है। यह प्रतिमा पहाड खोद कर बनाई गई है।

पालिताना की पश्चिम दिशा में पहाड के तलहटी में श्री आदिनाथ पादुका मन्दिर है। साथ में अन्य तीर्थंकरों के चरण चिन्ह स्थित हैं। इसी के करीब शत्रुंजय नदी बहती है जहां तीर्थंकर भगवान उपदेश देते हैं वहां स्वर्ग के देवता समोसरण की रचना चतुंमुखी आकार में करते हैं। प्रभु के अष्ट प्रतिहार्य ३४ अतिशय होते हैं। यह दृश्य इस समोसरण मन्दिर में दृष्टि गोचर होता है। मन्दिर की उंचाई १०८ फुट है। बीच बीच में ४८ फुट की उंचाई तथा चौडाई ७० फुट है। इस मन्दिर में १०८ जैन तीर्थों के दर्शन एक साथ एक ही स्थान पर होते हैं।

शत्रुंजय श्रद्धा और कला की दृष्टि से जैन धर्म का सर्वोपरि तीर्थ स्थल है। समस्त भारत में जैन तीर्थ हैं पर शत्रुंजय पालिताना का अपनी अलग पहचान है। यहां का कंकर कंकर शंकर है। इस यात्रा से जन्म के पाप नष्ट होते हैं। यहां की माटी को मस्तक पर लगाने के लिए देवता भी तरसते हैं। तीर्थ दर्शन से मनुष्य तो क्या, देव भी कृत कृत हो जाते हैं। पालीताना वह भूमि है जहां देवताओं का दिव्यत्व हर दिशा में झलकता है। पालीताना संसार की चिंता से मुक्त करने वाला तीर्थ है। जैन धर्म में उस प्राणी का जन्म लेना व्यर्थ माना जाता है जिसने जन्म लेकर दो तीर्थों का वन्दन नहीं किया। यह वह तीर्थ हैं जहां हर समय यात्रीयों का आवागमन बना रहता है। यहीं प्रमुख तीर्थ है जहां साधु

साध्वीयों का आना विपूल मात्रा में रहता है। पालिताना स्थावर व जंगम तीर्थ की दृष्टि से पुण्यभूमि है। यह जंगम तीर्थ साधु साध्वीयों के दर्शन का लाभ भी प्राप्त होता है।

पालीताना नगर के करीव ५ किलोमीटर के क्षेत्र में विशाल धर्मशालाओं का समूह है। छोर छोर पर पावन जिनालय हैं। पर असल तीर्थ तो तलाहटी से शुरू होता है। जेसे पहले कहा जा चुका है कि यहां ८६१३ मन्दिरों में ३३ हजारों जिन प्रतिमाएं हैं। पालीताना तीर्थ के १०८ नाम हैं। पर्वतमाला पर निर्मित व टोंकों में मोतीशाह की टोंक भव्यता की जीती जागती मिसाल है। पालीताना को शाश्वत तीर्थ माना जाता है। यहां पर अनंत भव्य जीवों ने निर्वाण रूपी ज्योति को प्रज्वल्लित कर कर्म वंधन को तोडा। प्रभु ऋषभदेव की स्मृति में वरसी तप के पारणें होते हैं। इस दृष्टि हस्तिनापुर और पालीताना दोनों ही स्थानों पर भव्य मेले लगते हैं।

पालीताना वास्तव में पादलिप्तपूर का अपभ्रंश हुआ है जो तीर्थ का वर्तमान नाम है। प्रभु ऋषभदेव ने वर्तमान काल के तीसरे आरे में हुए। पालीताना तीर्थ उनसे पहले भी थी। प्रभु ऋषभेदव के पुत्र भरत चक्रवर्ती से लेकर मंत्री कर्माशाह के नाम इस जीर्णोद्धार में शामिल हैं। फाल्गुन शुक्ला त्रयोदशी को छः कोस की प्रदक्षिणा लगाई जाती है जिस में एक लाख से अधिक यात्री भाग लेते हैं।

शत्रुंजय तीर्थ के समान शत्रुंजय नदी की महिमा भी गंगा से ज्यादा जैन ग्रंथों में उल्लेखित की गई है। यह नदी शत्रुंजय पहाड़ी पर स्थित यह मन्दिरों का नगर पालीताना शहर के दक्षिण में है। यहां के मंन्दिर दो जुडवां चोटीयों पर निर्मित हैं। यह पहाड समुंद्र की सतह से ६०० मीटर की उंचाई पर है। ३२० मीटर लम्बी इस प्रत्येक चोटी पर यह

मन्दिर निर्मित है। यह पंक्ति दूर से देखने में अंग्रेजी के अक्षर एस (S) के आकार की दिखाई देती है। विभिन्न आकार प्रकार के इन बहुसंख्यक मन्दिरों में विराजित जिन प्रतिमाएं संसार को अहिंसा व शान्ति का संदेश देती हैं। सं. १६५० में सेठ धनपत सिंह लक्ष्मीपत सिंह द्वारा बनाए गए। इस मन्दिर में ५२ देवालय है। मार्ग में छोटी मोटी अन्य देहरीयां हैं जिनमें चक्रवर्ती भरत, भगवान नेमिनाथ के गणधर व भगवान आदिनाथ, पार्श्वनाथ की चरण पादुकाएं हैं। यह वारिखिल्ल, नारद, राम, भरत, शुक परिव्राजक, धान थावच्चा पूत्र, शेलकसूरि, जाली, मयाली तथा अन्य देवी देवताओं की देहरीया हैं। बीच मार्ग में राजा कुमार पाल कुण्ड और साला कुंड आते हैं। साला कुंड के पास जिनेन्द्र टूंक है। जिस में ज्यादा गुरू मूर्तियां व देव मूर्तियां हैं। इन में माता पद्मावती देवी की प्रतिमा कलात्मक दृष्टि से सुन्दर है।

हम आगे बढ़ते हैं तो वहां रास्ता विभाजित होता है। आगे हाथी पोल में प्रवेश करने से पहले भव्य मन्दिर से पहले रामपोल और छीपरसी पोल है। आगे हाथी पोल में प्रवेश करते समय सूरजकुण्ड, भीम कुण्ड, एवं इंश्वर कुण्ड दिखाई देते हैं।

१. पहली टोंक का निर्माण सेठ नरशी केशव जी ने सं १६८१ में कराया था। इस भव्य टोंक में भगवान शांतिनाथ जी की भव्य प्रतिमा है।

२. दूसरी खरतरवसही टोंक है। इसे चौमुख टोंक भी कहते हैं। यह पर्वत के उत्तरी शिखर पर निर्मित है। शत्रुंजय में निर्मित टूंकों में यह सर्वोच्च टूंक है। काफी दूर से ही इस मन्दिर का उंचा शिखर दिखाई देता है। इस टूंक का नव निर्माण सं. १६७५ में सेठ सदारंग ने करवाया था। मन्दिर में आदिश्वर प्रभु की चौमुख जीके रूप में चार विशाल

प्रतिमाएं हैं। इसी टूंक में तीर्थंकर ऋषभदेव माता मरूदेवी का मन्दिर है। इस मन्दिर के पीछे पांडव मन्दिर है। जिस में पांच पांडव, कुन्ती व द्रोपदी की प्रतिमाएं स्थापित हैं।

३. तीसरी टोंक का निर्माण छीपा भाइयों ने करवाया था। उनके नाम से इसे छीपावसही टोंक कहते हैं। सं. १७९१ में निर्मित इस मन्दिर में आदिश्वर नाथ मूलनायक के रूप में विराजमान हैं।

४. चौथी टोंक साखरवसही है। सेठ साखर चन्द प्रेम चन्द द्वारा सं. १८९५ में इस टोंक पर भगवान ऋषभदेव, चंद्रानंन, वारिषेण व वर्द्धमान शाश्वत तीर्थंकारों की प्रतिमाएं विराजित हैं।

५. छटी छीपावसही टोंक का निर्माण छीपा भाई द्वारा सं. १८८६ में हुआ था। यहां मूलनायक द्वितिय तीर्थंकर श्री अजीतनाथ हैं।

६. सातवीं सेवावसही टोंक है। मोदी श्री प्रेमचन्द्र लवजी द्वारा इस इसका निर्माण सं. १८४३ में हुआ। इस में मूल नायक प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेव हैं।

७. आठवीं वालवसहीं टूंक है। मन्दिर का नव निर्माण सं ११९३ में वाला भाई द्वारा हुआ है। इस में मूलनायक आदिनाथ परमात्मा विराजमान हैं।

८. नवमीं टोंक मोतीशाह की है। सेठ मोतीशाह ने विशालतम मन्दिर का निर्माण सं १९९३ में करवाया था। मन्दिर में कई छोटे वड़े मन्दिरों का भव्य समूह है। यहां मूलनायक भगवान ऋषभदेव हैं।

प्रेम वसहीं टूंक के पास एक विशेष मन्दिर बना हुआ है। इस में प्रभु ऋषभदेव के १८ फुट उंची पद्मासन प्रतिमा विराजमान है। इसे अद्भुत वावा कहते हैं।

शत्रुंजय पर्वत की कुछ टूंक में तीर्थंकर ऋषभदेव

श्वेतवर्णीय २.१६ मीटर उंची पद्मासन प्रतिमा विराजमान हैं। इस प्रतिमा के बारे में कहा जाता है कि :-

गिरिवर दर्शन विरला पावे।

जिन शत्रुंजय तीर्थ नहीं भेट्यो तो गर्भ वास कहतरे।

यह पुख्य मन्दिर माना जाता है जो भव्य परिसर से घिरा है। मूल मन्दिर में रायण वृक्ष का प्राचीन है। इस वृक्ष के नीचे प्रभु ऋषभदेव ने तपस्या की थी। आज यहां २५ फुट की विशाल चरण पादुकाएं भक्तों की आत्मा का कल्याण करती हैं।

पालीताना में आगम मंदिर प्रसिद्ध है। जिस में सभी ४५ आगम शिलाओं पर खुदे हुए हैं। जम्बूदीप, विशाल म्यूज़ियम दर्शनीय है।

पीर अंगारे शाह :

यहां एक अनुपम स्मारक पीर अंगारे शाह की कब्र है। जहां हर तीर्थ यात्री पर्वत पर चढ़ने से पहले शीश झुकाता है। इस संत ने तीर्थ की रक्षा के लिए आक्रमणकारीयों पर अंगारे बरसाए थे। इस कारण इसका नाम अंगारे शाह पड़ा। इस मुस्लिम फकीर ने मूर्ति भंजक विदेशी आक्रमणकारीयों से इस तीर्थ की रक्षा की थी। जैन समाज इस अज्ञात संत के ऋण से कभी कभी मुक्त नहीं हुआ। इस कारण अंगारे शाह को संत ही नहीं भूमि रक्षक देव के रूप में पूजा जाता है। इस तीर्थ पर एक दिगम्बर जैन मन्दिर है। अंतकृतदशांग सूत्र में यहां से मोक्ष जाने वाले साधु साध्वीयों का वर्णन मिलता है।

इस तीर्थ पर हर राज्य शासण में शिकार पर प्रतिबंध रहा है। मुगलकाल से महाराज अकबर ने कई

फुरमान आचार्य जिनचन्द्र व आचार्य हीराविजय को दिए। इस तीर्थ को कर से मुक्त किया। इस तीर्थ पर बने मन्दिरों को देखकर हैरानी होती है कि इतने बडे पत्थर इतने उंचे पहाड़ पर कैसे शिल्पी द्वारा पहुंचाए गए होंगे।

पालिताना यात्रा :

मैं भावनगर देखने के बाद शाम को पालिताना पहुंचा। वहां मैं पंजाबी धर्मशाला में ठहरा। अगली सुबह हमारी यात्रा शुरू होनी थी। यह यात्रा आस्था की यात्रा थी। जैसे मैंने पहले ही कहा था कि यह मन्दिर नगर मन्दिरों का राजा है। मन्दिरों का शहर है। पुण्य उदय से ही ऐसे तीर्थ के दर्शन होते हैं।

मैं व मेरा परिवार हम तीर्थ पर पहुंच कर श्रृद्धा से गद्‌गद् हो उठा। इस तीर्थ की यात्रा से ज्ञान का प्रकाश सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है। मिथ्यात्व सहित १८ पापों का नाश होता है। मुझे स्वयं अनुभव हुआ, मैंने पाया कि यहां का कण कण भगवान है। यह साधु, साध्वी, श्राविक, श्राविकाओं के झुंड प्रति सुबह तीर्थ नायक के दर्शन करने निकल जाते हैं। इस तीर्थ का सर्वप्रथम उल्लेख मेरी दृष्टि में अंतकृतदशांग सूत्र में आया है। इस तीर्थ की यात्रा मैंने एक रात्रि के आराम के बाद शुरू की। पहले पहाड के नीचे देखने योग्य स्थल देखे। व्यवस्था अच्छी है। पंजाबी धर्मशाला में पंजाबी सहधर्मी के दर्शन हुए। गुजराती भाषा मुझे कठिन नहीं लगी। वैसे गुजराती हिन्दी भाषा समझ लेते हैं।

सुबह उठे, सूर्य देव के दर्शन से पहले पर्वत राज की चढ़ाई शुरू हुई। यह यात्रा कुछ उसी प्रकार की थी जैसे रामेद शिखर की थी। पर इस यात्रा में एक विशेषता थी वह पहाड पर दही का भोजन। कितने ही दही बेचने वाले

उपर घूम रहे थे। वैसे भी हमें गुजराती भोजन के स्थान पर पंजाबी भोजन धर्मशाला में प्राप्त हो गया। यह मारवाडी भोजन था, जो पंजाबी भोजन से ज्यादा अंतर नहीं। अढाई घंटे की थकान वाला यात्रा के बाद मन्दिरों का क्रम शुरू हुआ। मैंने श्रृद्धा-भक्ति के साथ आदिश्वर दादा के चरणों में पूजा की। पूजा के वस्त्र व द्रव्य व भाव पूजा की। यथा शक्ति सभी मन्दिरों के दर्शन किए। यह मन्दिरों का नगर, देव विमानों का समूह है। ऐसा अलौकिक तीर्थ संसार के मानचित्र पर देखने को उपलब्ध नहीं होता। ऐसे तीर्थ की यात्रा करना जिन भक्ति का प्रतीक है। हमारा जीवन धन्य हो गया। मैं अपना जीवन सफल मानता हूं कि मुझे भगवान ऋषभदेव की अलौकिक, चमत्कारी प्रतिमा के दर्शन का सौभाग्य मिला। मैंने प्रभु से विश्व शांति व अपने धर्मभ्राता रविन्द्र जैन के लिए आशीवाद मांगा। यहां सत्य, अहिंसा व अनेकांत के कण कण में दर्शन होते हैं। इस तीर्थ पर आकर प्रभु आदिश्वर से यही मांगा जाता है कि वार वार अपने दर्शन देना। अपने चरणों में बुलाना।

सिद्धांचल की पवित्र यात्रा करके मैंने जीवन का वह कर्तव्य पूरा किया जो हर जैन के लिए आवश्यक है। संसार में पालीताना सचमुच अनूठा स्थल है जहां श्रृद्धा, कला व भक्ति का समुद्र ठाटें मारता है। इन्हीं यात्रा को पूर्ण कर मैं वापस अहमदावाद आया। यहां पूज्य गुरूदेव श्री जय चन्द महाराज के पुनः दर्शन किए। मैं अपने बीच उन्हें पाकर आत्म विभोर हो रहा था। फिर मैंने गुरूदेव से वापसी की आज्ञा मांगी। उन्होंने मंगल पाठ सुना कर आशीवाद दिया। अहमदावाद से हम ने विचार किया कि क्यों न कला के केन्द्र माउंट आबू की यात्रा की जाए। इसी संदर्भ में मैंने सपरिवार इस तीर्थ व पर्यटन स्थल की यात्रा की।

माउंट आबु की यात्रा

तीर्थ दर्शन :

भारतवर्ष के प्रमुख पर्यटन स्थलों में माउंट आबू का नाम सारे विश्व में फैला है। उंची पर्वतमालाओं के बीच विकसित इस पर्यटन स्थल का प्राकृतिक रूप धरती पर स्वर्ग है। माउंट आबू के लिए आबू रोड़ स्टेशन पर उतरना पड़ता है। यहां से किलोमीटर दूर देलवाड़ा के विश्व प्रसिद्ध जैन मन्दिर हैं। जो व्यक्ति एक बार इन मन्दिरों के दर्शन कर लेता है वह ताज महल को भूल जाता है। यहां की सूक्ष्म कला अनूठी है। मन्दिर में शिल्प के विभिन्न प्रकार मिलते हैं। इन मन्दिरों को कई दिन देखने पर भी इन बारीकीयों का रहस्य समझना कठिन है। इस मन्दिर ने जैन शिल्प कला को शाश्वत सम्पदा को अपने में संजोकर रखा है। यहां के संगमरमरी मन्दिर एक ओर शिल्पीयों की अनूठी कला को प्रस्तुत करते हैं, वहां यह मन्दिर तीर्थंकरों की वीतरागता का प्रतिनिधित्व भी करते हैं। यहां का वातावरण एक हिल स्टेशन की भांति है। इस तीर्थ पर अन्य धर्मो के स्थल व पर्यटन स्थल हैं। हर वर्ष १६ लाख यात्री विश्व के कोने कोने से यहां आते हैं।

देलवाडा पांच जैन मन्दिरों का समूह है। यहां दो मन्दिर अत्यंत विशाल है। शेष तीन मन्दिर, मन्दिर की विशालता के पूरक हैं। शिल्प सौंदर्य की सूक्ष्मता, कोमलता और गुम्बजों तथा मेहरावों का बारीक अलंकरण पहली दृष्टि में पर्यटक के मन पर अमिट छाप छोड़ जाता है। मन्दिर के दर्शन से अध्यात्मि वातावरण प्राप्त होता है। नृत्य और नाट्यकला के उकेरे गए शिल्प चित्र अद्‌भुत व अनुपम हैं। मन्दिर की छतों पर लटकते, झूलते गुम्बज और मुख मण्डल

के आस पास फैले परिसर में शिल्पांकित मां सरस्वती, अंबिका, लक्ष्मी, चक्रेश्वरी, पद्मावती, शीतला आदि देवीयों की प्रतिमाएं शिल्पकला के अदभूत नमूने हैं। शिल्प कला की वारीकी देखने के लिए इन मूर्तियों के नाखून और नासाग्र आदि का अवलोकन ही काफी है।

इन मन्दिरों में शिल्पीयों ने अपनी छैनी के जौहर दिखाए हैं। मन्दिर की सभी प्रतिमाएं कठोर संगमरमर में उत्कीर्ण की गई हैं। इस से स्वयं ही देखने वालों को शिल्पीयों के श्रम का आभास होने लगता है। मन्दिर के उत्कीर्ण को गहराई से देखने पर आभास होता है। कि उस काल के शिल्पीयों की मुख्य अभिरूचि आलंकारिक अपेक्षा मूर्तिकार ने देव प्रतिमा के अंकन में विशेष सिद्ध-हस्तता प्राप्त कर ली थी। इन देव प्रतिमाओं में नायको, विद्याधरों, अप्सराओं, तथा जैन धर्म के अन्य देवी देवताओं का अंकन सम्मिलित है। इन का निर्माण गुम्बजों, स्तम्भों, तोरणों में हुआ है।

कला व शिल्प के भण्डार यह जैन मन्दिरों में जैन तीर्थंकरों का चित्रण स्वाभिक है पर मन्दिर के निर्माताओं सूत्रधारों और शिल्पीयों ने सम्पूर्ण हिन्दू संस्कृति का शिल्प प्रस्तुत करके अपनी धर्म के प्रति उदारता का उदाहरण प्रस्तुत किया है। यही नहीं, यहां भारतीय संस्कृति के विभिन्न अंगों को प्रस्तुत किया गया है। अपने प्रेमी का इंतजार करती प्रियेसी को यहां स्थान दिया गया है। यहां कुल छह मन्दिर हैं। इनमें पांच श्वेताम्बर, एक दिगम्बर है। इन का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है।

महावीर स्वामी का मन्दिर :

जैन धर्म के अंतिम तीर्थंकर श्रमण भगवान महावीर को समर्पित इस सादे मन्दिर में भगवान महावीर

सहित ६ भव्य व सुन्दर प्रतिमाएं हैं। इसका निर्माण १५८२ में हुआ था। मन्दिर के वाह्य भाग की छतों पर आयरिश चित्रकारी क्षतिग्रस्त सी हो गई है। यह मन्दिर यंहां निर्मित सव से छोटा मन्दिर है। यह मन्दिर प्रभु महावीर के अहिंसा के संदेश को हर कोण से प्रस्तुत करता है। यही मन्दिर सादगी में भी अपना प्रभाव छोड़ता है।

विमल वसहीं - इतिहास :

देलवाडा परिसर के इस भव्य परिसर का निर्माण महाराजा भीमदेव के मंत्री, धर्मपारायणा, सेनापति सेठ विमलशाह ने करवाया था। अपने जीवन का वड़ा हिस्सा उन्होंने श्रमण संस्कृति व कला को समर्पित कर दिया। इस मन्दिर के शिल्पी थे, महान शिल्पकार कीर्तिधर। उनके निर्देशन में इस कला निधि का निर्माण सं १०३१ में सम्पन्न हुआ। इस भव्य जिनालय की प्रतिष्ठा आचार्य वर्धमान सूरि के कमलों से सम्पन्न हुई। करीव १५०० शिल्पी मन्दिर का निर्माण किया। सेठ विमलशाह श्रमिकों को हमेशा प्रसन्न रखते थे, इस की झलक इन मन्दिरों का हर पत्थर कहता है। इस मन्दिर पर १८५३ करोड स्वर्ण मुद्राएं खर्च आई। यह उस जमाने की वात जव शिल्पीयों व मजदूरों को वहुत ही कम श्रम मिलता था। आचार्य श्री के सानिध्य में प्राण प्रतिष्ठा का कार्य मंगलमय ढंग से सम्पन्न हुआ।

सेठ विमलशाह के वंशज पृथ्वीपाल ने जीर्णोद्धार सं १२०४ से १२०६ तक इस मन्दिरों की देहरीयों का निर्माण कर इस मन्दिर को चार चांद लगाए। अपने पूर्वजों की यश कीर्ति को चिरस्थाई रखने के लिए उन्होंने विशाल हस्तिशाला वनाई। इस हस्तिशाला के द्वार पर विमलशाह को अश्वारूढ़ प्रतिमा के रूप में भव्य रूप से दिखाया गया है। सन १३६१

में अलाउदीन खिलजी ने इस जिनालय को काफी नुकसान पहंचाया। इस क्षति की पूर्ति मंडोर (जोधपूर) के वीजड़ व लालक भाईयों ने करवाई। उन्होंने इन मन्दिरों का जीर्णोद्धार करवाया।

मन्दिर के मुख्याद्वार में प्रवेश करते ही संगमरमरी भव्य कलात्मक छतों, गुम्बजों, तोरण द्वार को देख कर मन प्रसन्न हो जाता है। अलंकृत नकाशी, शिल्पकला की भव्यता और सुकोमलता की झलक यहां हर तरफ दृष्टि गोचर होती है। इस मन्दिर में ५७ देवरीयां हैं। जिनमें विभिन्न तीर्थंकरों की प्रतिमाएं परिवार सहित विराजमान हैं। प्रत्येक देहरी के नक्काशीपूर्ण द्वार के अन्दर दो दो गुम्बज हैं। जिनकी छतों पर उत्कीर्ण शिल्पकला दर्शकों को अभिभूत करती है।

मन्दिर के दसवीं देहरी के वाहर २२ तीर्थंकर नेमिनाथ के जीवन के दृश्य अंकित हैं। मुख्य द्वार से प्रभु नेमिनाथ की वाराज का दृश्य व कृष्ण की जल क्रीडा का उत्कीर्णन हुआ है। रंगमंडप में सप्पा, सरस्वती, लक्ष्मी व भरतवाहुवली यृद्ध का दृश्य, अयोध्या व तक्षशिला के दरवार दर्शनीय हैं।

वाईसवीं व तेईसवीं देहरी के वीच एक गुफानुमा मन्दिर है। जिस प्रथम तीर्थंकर प्रभु आदिश्वर नाथ की शयावणीय प्रतिमा स्थापित है। यहीं प्रतिमा माउंट आवू में विमल शाह को प्राप्त हुई थी। उन्हें माता अंविका ने आदेश दिया था जिस के फलस्वरूप उन्होंने यह प्रतिमा भूमि खुदवा कर निकाली थी। जव यह प्रतिमा प्रकट हुई तो ब्राह्मणों ने इस स्थान पर जैन मन्दिर वनने की आज्ञा प्रदान नहीं की। इस का कारण इस तीर्थ का ब्राह्मण तीर्थ होना था। विमलशाह मंत्री था। वह चाहता तो राजा से मन्दिर की आज्ञा जारी करवा सकता था। परन्तु विमलशाह मंत्री व

सेनापति होते हुए भी परमार्हत था वह अहिंसा में विश्वास रखता था। उसने ब्राह्मण समाज से प्रार्थना की कि वह यहां से प्राप्त जिन प्रतिमा को विराजित करने के लिए व जिनालय बनाने के लिए स्थान दें। ब्राह्मणो ने कहा "मंत्री जी ! एक ब्राह्मण तीर्थ पर जैन मन्दिर कैसे बन सकता है ? यह वह धरती है, जहां परशुराम ने क्षत्रियों का नाश किया था। हमारे लिए यह पवित्र तीर्थ है। हम जैनों को मन्दिर नहीं बनाने देंगें।" श्रावक विमलशाह ने चतुरता से काम लेते हुए कहा "हे विद्वानो ! आप मुझे धरती का छोटा सा टुकडा प्रदान करें, मैं उसकी मुंह मांगी कीमत चुकाने को तैयार हूं।" ब्राह्मण नेता ने मंत्री विमलशाह की बात सुनी। फिर ब्राह्मणों के नेता ने परस्पर विमर्श करके कहा "अगर तुम सचमुच प्रभु भक्त हो और मन्दिर बनाना चाहते हो तो जितनी भूमि चाहिए उतनी भूमि पर स्वर्ण मोहरें बिछा दो"

उस जमाने में स्वर्ण की मोहरे बड़ी बात थी। विमलशाह ने यह शर्त मान ली। स्वर्ण मोहरों के मध्य में छिद्र होता था। विमलशाह ने सोचा "यह ब्राह्मण खाली जमीन देख कर अपनी बात से मुकर न जाएं, इस लिए सर्व प्रथम इन छिद्रों को सोने से बंद करना चाहिए।" बडे लम्बे समय तक विमलशाह ने करोडों स्वर्ण मुद्राओं के छिद्र बन्द करवाए। फिर इन्हें हाथी पर लाद कर उस स्थान पर लाया गया। सारे स्थान पर मोहरें बिछा दी गईं। ब्राह्मणों ने वह स्थान विमलशाह को इतनी बडी कीमत लेकर दिया। इस प्रकार यह मन्दिर बडे कठोर संघर्ष से तैयार हुआ।

जैसे पहले बताया गया है इस मन्दिर की ५७ देहरीयां हैं इन में से दसवीं देहरी का वर्णन किया जा चुका है। तेइसवीं देहरी में अंबिका माता की आकर्षक प्रतिमा विराजमान है। यह प्रतिमा विमलशाह की कुल देवी रही है।

३२वीं देहरी पर श्री कृष्ण द्वारा कालिया दमन का दृश्य अंकित है। एक ओर श्री कृष्ण पाताल लोक में शेष नाग पर शयन कर रहे हैं, वहीं दूसरी ओर यमुना तट पर गेंद व गुल्ली डंडा खेल रहे हैं।

३८वीं देहरी में १६ हाथ वाली सिंह वाहिनी विद्यादेवी की कलात्मक मूर्ति है। ४२वीं देहरी के गुम्बज में मयूरारूढ़ सरस्वती, गजवाहिनी लक्ष्मी, कमल पर लक्ष्मी, गरुड़ पर शंखेश्वरी देवी की मनमोहक प्रतिमाएं यात्रीयों का ध्यान अपनी ओर खींचती हैं। यह सूक्ष्म कला का प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

४४वीं देहरी में नक्काशीदार तोरण और परिसर युक्त श्री वारिषेण तीर्थंकर की शाश्वत प्रतिमा विराजमान है। ४६वीं से अड़तालसवीं देहरी के बाहर गुम्बज में १६ हाथ वाली शीतला, सरस्वती और पद्मावती देवीयों की चमत्कारी प्रतिमाएं विराजमान हैं।

मन्दिर का सर्वोत्म कलात्मक भाग उसका रंग मंडप है। १२ अलंकृत स्तम्भों, और कलात्मक सुन्दर तोरणों पर आश्रित, बड़े गोल गुम्बज के हाथी, घोडे, हंस, नर्तक आदि की ग्यारह गोलाकार मालाएं और झूमरों के स्फटिक गुच्छे लटक रहे हैं। प्रत्येक स्तम्भ के उपर वाद्य वादन करती ललनाएं हैं और उनके उपर भिन्न भिन्न प्रकार के वाहनों पर सुशोभित १६ विद्यादेवीयां हैं। रंग मंडप से उपर की झांकी में नो समकोण आकृति वाली प्रत्येक अलंकृत छत पर विभन्न पर की खुदाई इस मन्दिर की सुन्दरता में वृन्दि करती है।

१९९१ में विमलवाही की हस्तिशाला का जीणोद्धार हुआ था। मूल गर्भ गृह में प्रभु आदिश्वर नाथ की मनोरम प्रतिमा अपना ध्यान अपनी ओर आकर्षित करती हैं। गुढ़ मण्डप में ध्यानास्थ प्रभु पार्श्वनाथ की प्रतिमा इस मन्दिर की

सुन्दरता में वृद्धि करती है।

लुणवसही - इतिहास व दर्शन :

देलवाडा का यह मन्दिर कला जगत का प्राण है। मन्दिर में इतनी सूक्ष्म कला प्रदर्शित की गई है कि यात्री का ध्यान बरबस उस ओर खिंच जाता है। यह विमलावसही की तरह समानता लिए हुए था। इस कलात्मक मन्दिर का निर्माण वारतुपाल तेजपाल व उनकी पत्नियों ने कराया था। उनके पुत्र का नाम लावण्य सिंह था। इसी का अपभ्रंश लुणवसही हो गया। यह मन्दिर २२वें तीर्थंकर भगवान अरिष्टनेमि को समर्पित है। उनकी श्यामवर्णीय प्रतिमा कसौटी के पत्थर से निर्मित की गई है। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा संवत् १२८७ चैत्र कृष्णा तृतीय को आचार्य श्री विजय सैन सूरी जी ने अपने कर कमलों से की थी। इस मंदिर पर १३ करोड़ स्वर्ण मुद्राएं खर्च हुई थी। दोनों भाई जैन धर्म के परम श्रावक व धर्म के प्रति समर्पित थे। इस मन्दिर के शिल्पी थे सोमन देव। सोमन देव अपने समय के प्रसिद्ध शिल्पी थे। इस मन्दिर को अलाउदीन खिलजी ने क्षतिग्रस्त किया था। ये बात संवत् १३६८ की है जब अलाउदीन खिलजी के सैन्य दल ने मन्दिर के गर्भ गृह व अन्य भागों को क्षतिग्रस्त किया था। सं १३७८ को सेठ चण्ड सिंह ने इस मन्दिर का जीर्णोद्धार करवाया।

ये मन्दिर मानव जाति के लिए उपहार तुल्य है। इस मन्दिर के मुख्य द्वार में प्रवेश करते ही मन्दिर अपने भव्य कलात्मक रूप में प्रस्तुत होता है। यहां विश्व प्रसिद्ध देवरानी व जेटानी के गोखले (मन्दिर) हैं। इनका निर्माण दोनों भाईयों की धर्म पत्नियों ने अपने निज द्रव्य से करवाया था। बाईं ओर के गोखले में प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव विराजमान हैं। दाईं ओर के गोखले में भगवान शान्ति नाथ

की प्रतिमा स्थापित है। दोनों गोखलें देवरानी व जेटानी के प्रेम का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। दोनों का शिल्प एक सा है। इनकी की देहरीयां को देखने से लगता है कि शिल्पकार ने इनमें प्राण फूंक दिए हों। इस मन्दिर में ५२ देहरीयां हैं। यहां की हस्तिशाला में १० हाथी हैं।

मन्दिर के रंग मंडप में पहुंचते ही हमें कला की अनूठी उदाहरण देखने को मिलती है। गुम्बज के मध्य में लटकता झुमका स्टीक विन्दु प्रतीत होता है। मन्दिर की शत वेमिसाल है। हर तरफ शिल्पकला के अनूठे नमूने प्रस्तुत होते हैं। प्रत्येक स्तंभ पर १६ विद्या देवीयां अपने वाहनों सहित खड़ी हैं। चारों ओर कलात्मक तोरण दर्शक का मन मोह लेते हैं। रंग मंडप के दक्षिण की ओर दीवारों और छतों पर श्री कृष्ण जी के जन्म का दृश्य अंकित किया गया है। माता शयन कर रही है। पास ही उस कारागृह को अंकित किया गया है जहां श्री कृष्ण का जन्म हुआ था। कृष्ण की वाल लीलाओं में उनका गोपाल मित्रों के साथ भ्रमण अंकित किया गया है। यह कार्य नक्काशी व शिल्प का उत्कृष्ट प्रमाण है। रंग मण्डप के आगे नव चौंकी है। यहां की ६ छतों पर प्रत्येक में श्रेष्टत्म नक्काशी का आश्चर्यजनक शिल्प है। संगमरमर में ऐसे सुन्दर पुष्प गुच्छ उभर आए हैं, जैसे न पहले दिखते हैं न आगे दिखेंगे।

मन्दिर की परिक्रमा में ५२ देहरीयां हैं जिनके परिकर एवं गुम्बज में कला की वारीकीयां प्रस्तुत की गई हैं। देहरी १ से १० तक क्रमशः अंविका देवी की प्रतिमा, पुष्प नृतकीयां, पंच कल्याणक, हंस के कलात्मक पट्ट, द्वारिका के दृश्य व समोसरण का दृश्य मन को लुभावने वाला है।

११वें गुम्बज में ७ पंक्तियां हैं। हाथी, घोड़े, नाट्यकला भगवान नेमिनाथ जीवन प्रसंग, विवाह, वैराग्य,

दीक्षा का वर्णन है। प्रभु नेमिनाथ के इंतजार में बैठी राजुल को गवाक्ष में बैठे दिखाया गया है। १८ से २६वीं देहरी के गुम्बजों में कला के विभिन्न पक्षों को उजागर किया गया है। देहरी २६ से २७ के मध्य में विशाल हस्तीशाला है। ये संगमरमर के १० सुन्दर हाथीयों की प्रतिमाएं सुशोभित हैं। इस मन्दिर के निर्माताओं ने अपने गुरूजनों की प्रतिमाएं स्थापित की हैं। इस गुम्बज में सुन्दर गहरे जलाशय का कलात्मक दृश्य उभरा हुआ है।

लुणवसही मन्दिर के बाहर दाईं ओर एक दिगम्बर जैन मन्दिर है। जो भगवान कुन्थुनाथ को समर्पित है। वहां से सीढ़ीयां उतरने पर काले पत्थर का कुम्भ स्तम्भ है। संवत १४४६ में इसे मेवाड़ के राणा कुम्भा ने बनवाया था। यहीं दाईं ओर वृक्ष के मध्य में युग प्रधान दादा श्री जिनदत्त सूरी की छत्री है। यहां जैन जगत के महा चमत्कारी दादा श्री जिनकुशल सूरी जी महाराज की चरण पादुका भी स्थापित है।

पीतलहर मन्दिर :

इस मन्दिर का निर्माण दानवीर सेठ श्री भामाशाह ने करवाया था। इस मन्दिर के निर्माण का समय संवत् १३७८ से १३८६ माना जाता है। इस मन्दिर का जीर्णोद्धार गुजरात के सेठ ने करवाया था। मन्दिर में पांच धातु से निर्मित प्रथम तीर्थंकर भगवान श्री ऋषभदेव की प्रतिमा विराजमान है। पांच धातु का परिकर आठ गुणा सवा पांच फुट का है। इस प्रतिमा में ज्यादा मात्रा पीतल की है। इसी कारण इसे पीतलहर कहते हैं। इस मन्दिर में प्रतिमा की प्रतिष्ठा संवत् १४६८ में आचार्य श्री लक्ष्मी सागर सूरीश्वर जी के कर कमलों द्वारा सम्पन्न हुई थी। इस मन्दिर में

संगमरमर की कई विशाल प्रतिमाएं हैं जो कि कला का बेजोड़ नमूना हैं।

खरतरवसही - पार्श्वनाथ मन्दिर :

पीतलहर मन्दिर के बाईं ओर बना यह मन्दिर काफी विशाल है। जैन धर्म में श्वेताम्बर समाज के ८४ गच्छ हैं। इन में खरतर गच्छ का इतिहासक स्थान है। इस गच्छ की साहित्य कला को बहुत बडी देन है। इसका प्रमाण यह मन्दिर व इसके निर्माणकर्त्ता श्रावक माण्डिलक हैं। यह पालीताना तीर्थ में भी खरतरवसही है। यह मन्दिर तीन मंजिला है इसके चारों ओर चहुं दिशाओं की ओर प्रभु पार्श्वनाथ की चार प्रतिमाएं विराजमान हैं। इसी लिए इसे चौमुखा मन्दिर भी कहते हैं। इस मन्दिर की प्रतिष्ठा संवत १५१५ आषाढ़ कृष्णा १ को आचार्य श्री जिनचन्द्र सूरी जी ने अपने कर कमलों से की थी। मन्दिर का शिखर सुरम्य है। मूल नायक की प्रतिमा श्वतेवर्ण की है। परिकर कलात्मक है। मन्दिर की बाहरी दीवारों पर दिगपालों और स्त्रीयों की श्रृंगारिक शिल्प कृतियां प्रस्तुत की गई हैं। खरतरवसही को कारीगरों का मन्दिर भी कहा जाता है। इसक निर्माण शिल्पीयों ने बाकी बची सामग्री से श्रद्धावश अपना शिल्प प्रस्तुत करने के लिए किया था। मन्दिर की देख रेख सेठ आनंद जी कल्याण जी पेढी करती है।

मांउट आबू पर्यटन स्थल है। यह आबू रोड से ३८ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यहां ठहरने के लिए होटल व धर्मशालाओं की सुन्दर व्यवस्था है। इससे ६ किलोमीटर दूर गोमुख है और आगे जाने पर वशिष्ट ऋषि का आश्रम व श्री हनुमान मन्दिर है। एक हजार सीढ़ीयां चढ़ने पर गोमुख तक पहुंचा जा सकता है। यहां सूर्य उदय

व अरत का दृश्य मनमोहक होता है। सन् साईट प्वाइंट से बाजार मार्ग पर नक्की झील है जो पहाडों से घिरी हुई है। यहां प्राकृति अपनी छटा विखेरती है। यह कृत्रिम् झील अनेकों द्वीपों से घिरी है। यहां पर्यटक नौका विहार का आनंद लेते हैं।

कुछ ही दूरी पर मधुवन के पास ब्रह्मकुमारी ईश्वरीय शिक्षा विद्यालय विश्व को शान्ति का उपदेश देता है। यहां धार्मिक संग्रहालय है। कोडरा वांध से शहर की जलपूर्ति होती है। इस वांध से तीन किलोमीटर दूर जाने पर अधरादेवी का मन्दिर है। यह मन्दिर पहाड को काट कर बनाया गया है। २२० सीढीयां चढने पर मन्दिर का मुख्य द्वार आता है। प्रवेश द्वार से आगे का रास्ता तंग होता है, यह अवुर्दा देवी नगर की देवी मानी जाती है। इस का अपभ्रंश आवू पड़ा। इस मन्दिर से नगर का दृश्य मनोरम दिखाई देता है।

इस नगर में श्वेताम्वर जैन स्थानक वासी उपाध्याय श्री कन्हैया लाल ने श्री वर्धमान जैन केन्द्र की स्थापना की है। जहां आगमों पर विशाल स्तर पर शोध कार्य होता है। यहां जैन स्थानक विशाल ग्रथाल्य, औषधालय, धर्मशाला व भोजनशाला की सुविधा यात्रीयों को प्राप्त है। आवू तीर्थ राजस्थान गुजरात की सीमा पर विश्व प्रसिद्ध पर्यटन स्थल है।

यात्रा विवरण :

मैं गुजरात की यात्रा सम्पन्न कर सीधा माउंट आवू रोड पहुंचा। जिन स्थानों को मैंने देखा, उनका विवरण मैंने पहले कर दिया है। मेरा उद्देश्य मात्र तीर्थ यात्रा करना था। इस यात्रा में मैंने देखा की आवू तीर्थ पर हमारे श्रावकों

ने अपने धन का सद्उपयोग करते हुए जैन कला के माध्यम से जैन संस्कृति की अभूतपूर्व प्रभावना की है। हमारे यह मन्दिर श्रृद्धा, कला व भक्ति का त्रिवैणी संगम हैं। यह तीर्थ व यहां स्थापित मन्दिर मेरी आस्था का केन्द्र हैं। मैंने प्रभु का नाम सुमिरन करते हुए इन तीर्थों की यात्रा धर्म प्रभावना हेतु की। वह श्रावक धन्य हैं, वह शिल्पी धन्य हैं, वह गुरूदेव धन्य हैं जिनकी प्रेरणा व परिश्रम से इस तीर्थ में मन्दिरों का कलात्मक निर्माण हुआ। मैंने यहां मन्दिरों में पूजा अर्चना की।

अचलगढ़ तीर्थ की यात्रा – तीर्थ दर्शन :

यह तीर्थ माउंट आवू से लगभग ११ किलोमीटर की दूरी पर अचलगढ़ स्थान पर है। यह दुर्ग व इतिहासक स्थान है। इस तीर्थ पर जाने के लिए हमें आवू के श्री वर्धमान महावीर केन्द्र से रास्ता जाता है। यह तीर्थ हिन्दुओं व जैनों का पवित्र स्थान है। देलवाडा से भी यहां के लिए जाया जाता है। अचलगढ़ का किला ४००० फुट की उंचाई पर स्थित है। यहां का चौमुखी का मन्दिर प्रसिद्ध है। दो मंजिलों के इस मन्दिर में चार-चार बडी और भव्य प्रतिमा है। इन प्रतिमाओं की संख्या १४ है। यह पांच धातु की हैं। इन प्रतिमाओं का वजन १४४४ मन है। मुख्य मन्दिर में जैन तीर्थंकरों के जीवन चारित्र व कुछ जैन तीर्थों का चित्र उत्कीर्ण किये गए हैं। इसके पास प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव जी की, श्री कुंथु नाथ जी, श्री पार्श्व नाथ जी, श्री शांतिनाथ जी की प्रतिमाएं हैं। साथ में गुरू समाधि मन्दिर है। प्रसिद्ध चमत्कारी योगीराज श्री शांति विजय ने यहां तपस्या की थी। इस कारण यह स्थान पूज्नीय वन गया है।

यहां का अचलेश्वर महादेव का मन्दिर हिन्दु धर्म